लोकविद्या ग्रुप की ऑनलाइन बैठक (2/7/25) में 'कला और स्वराज' चित्रा सहस्रबुद्धे का वक्तव्य

पिछले बार जब इस समूह में कला पर बातचीत चल रही थी तो हमने कुछ दो बिंदुओं पर अपनी बात को रखा था ... कि हम लोग यह चर्चा किस लिए कर रहे हैं कला पर क्योंकि ... हमारे विचार से यह है कि कला एक तो समाज में बसती है और कलाकार कोई व्यक्ति हो या न हो, समाज में जो कला का रूप है वह उसके जेहन में किसी न किसी रूप में रहता है. क्योंकि उसके उस ज्ञान के द्वारा ही उसको (...) तो यह ज्ञान कला का ज्ञान हमको एक रास्ता दिखा सकता है. और हमने यह भी महसूस किया कि अंत में लोकविद्या या कला इसमें कोई अंतर नहीं दिखाई देता है. लोकविद्या दर्शन और कला दर्शन लगभग एक ही हो जाते हैं. तो, इन दो बिंदुओं पर एक यह बिंदु ... और दूसरा यह कि समाज में शक्ति का रूप कला में है. तो, इन दो बिंदुओं की निरंतरता में ही आज की बात मैं रखना चाहती हूं.

आज की बात का विषय मैं इस रूप में निरूपित करना चाहती हूँ कि स्वराज चेतना का एक स्रोत कला में है.

हमारा समूह ... लोकविद्या समूह ... शुरू से एक ...एक नए राजनीतिक दृष्टिकोण की खोज में है, और पिछले बीस वर्षों में हम लोग कई बिंदुओं से, कई विचारों से, कई कार्यक्रमों के मार्फ़त बात कर रहे हैं, और कई आंदोलनों का हिस्सा होते हुए इस नतीजे पर पहुंचे हैं कि दुनिया भर में राजनीतिक आर्थिक शक्तियों का केन्द्रीयकरण होते जा रहा है। यह स्वराज की सार्थकता को प्रकट करता है। अगर बहुजन समाज को अपने उत्पीड़ित, शोषित स्थिति से बाहर निकालना है, तो स्वराज एक रास्ता हो सकता है. स्वराज पर लगातार दो हज़ार पंद्रह से हम लोग लगातार बातचीत कर रहे हैं, खासतौर से भ्रष्टाचार विरोधी आंदोलन के जो स्वराज की बात थी। उसके बाद से और समझ काफी विस्तृत होती गई। यहां तक कि हम लोगों ने कहा कि स्वराज में अगर वितरित सत्ता का विचार प्रमुख है, तो उसके उसका एक ज्ञानगत आधार भी वैसा ही होना होगा ... जिस तरह से लोकविद्या का है। तो, स्वराज ही होना होगा। इस तरह से स्वराज और लोकविद्या के बीच हम लोगों ने बहुत सारे संबंधों को खोजने की कोशिश की और यह एक ताकत के रूप में सामने आया।

लेकिन कुछ और बातें थी जिन पर हम लोकविद्या के मार्ग पर बात नहीं कर पाए, और बहुत सी बातें कला के दर्शन में दिखाई दी। उदाहरण के लिए ... एक दो उदाहरण लेंगे कि ... स्वराज में जैसे यह कहा गया है कि (... ...) तो सामान्य अर्थ यह निकाला जाता है कि स्वशासन को और सिर्फ इस तरह की बातें होती हैं. लेकिन प्रमुख यह है कि उसमें प्रत्येक व्यक्ति की एक स्वायत्त सत्ता ..., प्रत्येक इकाई की समाज के क्षेत्र की ... भाषा, उद्यम गत प्राकृतिक संसाधनों का भंडार इत्यादि सब में एक स्वायत्त सत्ता का विचार होता है. उसकी स्वीकृति ... तो स्वराज्य ऐसा राजनीतिक विचार है जिसमें इन सब में एक साथ स्वायत्त सत्ताओं का जाल बिछा हुआ है, और इस जाल के तहत प्रत्येक व्यक्ति की सक्रियता और सत्ता इस जाल के तहत स्थापित होती है. इसको पहचानने की बाद इस बात की गहराई में जब गए हैं तो ... और इसके साथ ही एक और बात हुई ... कि समाज के बारे में हमारी समझ कुछ अलग होने लगी ... हम लोगों ने महसूस किया कि समाजशास्त्र के मार्फत समाज की जो आँखों समझ सामने आती है, वह बहुत जड़ है। और हमारे यहां के समाज के लिए लागू नहीं हो पाती है. तो हम लोगों ने गांधी ने नए समाज के बारे में क्या कहा है... या विविध जो जातियां हैं उनको ... अपने को कैसे ये करती हैं ... इसकी गहराई में जब गए हम लोगों को समाज एक जैव क्रिया के रूप में बनते, और खत्म होते दिखते दिखाई देने लगे, ... ठीक वैसे ही जैसे लोकविद्या पैदा होती है, नवीन होती है और फिर लुप्त भी हो जाती है, या अनेक धाराओं में मिलकर नई धाराओं को जन्म दे देती है ठीक वैसे ही समाज की रचना दिखाई देने लगी। तो यह समझ में आया कि लोकविद्या इसलिए समाज के पुनर्निर्माण का एक ज्ञानगत आधार बनती है।

तो समाज स्वराज और लोकविद्या इकाइयां इन तीनों के बीच घूमते हुए हम लोगों को आपसी संबंधों की समझ होने लगी। लेकिन फिर भी व्यक्ति की जो स्वायत्त सत्ता है उसका जो अंतर-मन है और लोगों के साथ जो संबंध है, बहुत ज्यादा खुल नहीं रहे थे. जब तक कि हमने कला-दर्शन के मारफत लोकविद्या को देखना नहीं शुरू किया, जैसे कला दर्शन में यह बात है बराबरी का एक विचार सामने आया, अभी तक हम लोग बराबरी या समता का विचार जो पश्चिमी अंगों की अवधारणाओं के मारफत समझने की कोशिश की है, उसमें केवल सतही बराबरी की बात है। लेकिन बराबरी की बात कला में यूं देखी जाती है कि कलाकारों और उसके सामने बैठे श्रोता जिनको चाहे कला की समझ है नहीं है, जितनी है कम है ज्यादा है, इस कुछ लेना देना कलाकार की कला का को मान्यता कला के रूप में ज्ञान के रूप में तभी मिलती है जब वह अपने दर्शकों को अपने श्रोताओं को अपने पाठकों को अपने साथ उठा ले जाता है ... जब तक अपने धरातल ... उनको उनके धरातल से अपने तक ले नहीं जाता तब तक उसकी कला ज्ञान का वास्तविक रूप प्रकट नहीं करता है। यह कला का चरण है। ये बराबरी का एक प्रकार है। अब इससे हम लोग शायद समाज में बराबरी का क्या अर्थ होता है, इसको निरूपित करने की कोशिश करें तो काफी कुछ बातें निकलती है.

दूसरी बात यह कि कला में अलग अलग विद्याओं में ... कलाओं में ... कोई ऊँच-नीच नहीं मानी गई, ऐसा हमें कला-विचारकों के लेखन में मिलता है. इतना ही नहीं, कला मतलब ... हर जगह जो भी सृजन कार्य करता है, वो कला है, इस तरह की बात है. चाहे वह एक छोटी सी वस्तु बना रहा हो, चाहे वह एक बहुत बड़ा राग गा रहा हो, कोई महानाट्य प्रस्तुत कर रहा हो ... इन कलाओं में कोई ऊँच-नीच नहीं. सबको अलग अलग ढंग से ... सबके अपने स्वायत्त अस्तित्व को मान्यता है. उस आधार पर उसको परखा जाता है. यह विचार महत्वपूर्ण है. दूसरी बात यह है कि स्वराज में जैसे हमने कहा कि वह इस बात को जो भौतिक वस्तुओं से बाहर है, उसमें ... स्वराज में होता है..., जैसे गांधीजी के आंदोलनों में बहुत बार आता है कि भाईचारा ... भाईचारा होना चाहिए, दूसरों के प्रति संवेदनशील होना चाहिए, प्रेम हो, वगैरह, वगैरह या त्याग ... जैसे हम लोगों ने किसान आन्दोलन में कहा ... न्याय त्याग, भाईचारा। अब इनको हम कैसे समझें? इनको कैसे राजनीतिक दृष्टिकोण के निर्माण में एक महत्वपूर्ण बिंदु के रूप में पहचाने। यह थोड़ा मुश्किल हो जाता है समझाने के लिए, लेकिन कला के मार्ग को अगर हम देखें तो लोक संग्रह का प्रमुख बिंदु उनके इसमें यह है कि दूसरे के प्रति ... दूसरे के प्रति संवेदनशील होना... और जब आप किसी कला के मार्फत दूसरे को ताकत देने का प्रयास कर रहे हैं, ... तो दूसरे के अंदर चले जाना ... उस समय ... चाहे वो कला-प्रस्तुति के दौरान ही हो ... लेकिन उस समय को आप स्वयं को भूल जाते हैं, और आपको उसके इसमें होना है और वापस फिर अपने इसमें आना है ... मतलब वो पर्मनंट स्टेट नहीं है. तो यह जो संवेदना को भी समझना और उस दूसरे व्यक्ति की तरह सोचना भी जब तक आप उसका एक्ट करते हैं, या जब जब तक आप उसके बारे में लिख रहे हैं बगैर. तो संवेदनशील भी होना है और सबके लिए भी होना है. और यह किसी भी संत परंपरा में यह दोनों ही महत्वपूर्ण है. कि समाज में अगर नैतिक तानाबाना बनाना है, बनाए रखना है, निरंतर नवीन ... तो उसके लिए दो अवधारणाओं पर प्रमुखता से ध्यान देने की जरूरत है।

तो ये कला के इसके मार्फत हमने फिर लोकविद्या में देखना चाहा कि लोकविद्या में समाज में जो तानाबाना बुना जाता है उसमें बहुत से नियम हैं... कि आप ये प्रोडक्ट इतना ही बना पाएंगे, ये प्रोडक्ट साल में इतने ही महीनों में बना पाएंगे. ये केवल कोई मौसम, विधा, तकनीकी इनकी सीमाओं के तहत नहीं दिखाया जाता है और ना किसी रिचुअल के तहत तय होता रहा. यह किसी तरह का एक निश्चित अमाउंट समाज में पैदा होना चाहिए प्रोडक्ट्स का ... इस दृष्टि से उसको संयोजित किया गया है... कई लोगों ने इस बात पर अपने विचार व्यक्त किये हैं. एक बार इसको हम लोग विस्तार से खोलेंगे. कि ये जो नियम और यह जो रिचुअल्स हैं ये मनुष्य की गतिविधि को छंदमय बनाते हैं, छंदमय - एक शब्द कला आदर्शों से आता है, छंदमय का मतलब है खुद पर शासन करना. पहले स्वशासन सीखना. खुद पर खुद की सारी गतिविधियों पर एक अंकुश लगाना खुद की मर्जी से और खुद की इच्छा से. ये जो विचार है

यह सामूहिक समाज के अंदर भी होगा और व्यक्तिगत स्तर पर भी होगा और उससे बाहर भी. तो यह मनुष्य मनुष्य के बीच संबंधों में भी यह होगा मनुष्य और प्रकृति के बीच संबंधों में भी होगा. क्षेत्र-क्षेत्र के आपसी संबंधों में भी होगा अलग-अलग तरह की उत्पादन वस्तुओं के उत्पादन के साधनों के उत्पादन के संसाधनों के बीच में होगा. तो यह अलग-अलग तरह से आएगा. ये स्वराज के विचार के नजदीक बैठता है. कला मनुष्य को छंदमय बनाती है. इसका मतलब है कला कलाकार को उसके जीवन पर उसकी इच्छा से उसको आसपास की सांसारिकता से थोड़ी देर के लिए मुक्त करती थी।

जब कोई संगीत का राग गा रहा है, या चित्र बना रहा है, या मूर्ति कर रहा है ... तो वह आसपास क्या घटित हो रहा है इस पर ज्यादा ध्यान नहीं देता। दिन रात खाना पीना भी छोड़ देते हैं और यह मामूली से मामूली सृजन के दौरान हो जाता है. ऐसा कोई महान कृति कोई बना रहा है, इसलिए ऐसा होता है, ऐसा कुछ भी नहीं। तो, यह जो क्रिया है यह सब सबके साथ ... चाहे महिला रोटी बना रही हो, चाहे कोई नेता अगर वो ये है... और लोगों के बीच में काम कर रहा हो तो उसके साथ भी ... तो यह जो क्रिया है, वह दो काम को महत्वपूर्ण करती है, एक तो नैतिक स्तर पर लोक-सम्मत क्रियाओं को आगे बढ़ाती है ... वो कितनी आगे बढ़ेंगी, कितना ... कितनी गहराई में जाएंगी, ये अलग सवाल है, पर वो करती है, यह महत्वपूर्ण है.

तो, हम हमारा यह कहना है कि कला स्वराज चेतना का एक स्रोत है और इस स्रोत को हम लोगों को परखना चाहिए का विशेष रूप से लोकविद्या जन आंदोलन जब बात करता है ... कि शास्त्रों और लोक में अधिक भेदभाव नहीं रहा है ऐसा इस बात की परंपराएं हमें कहती है तो फिर साधारण गृहिणी का जो भी घर का काम है वो कलात्मक रहा है, उसको ज्ञान के रूप में मान्यता मिलनी चाहिए, उसको ... ज्ञान के रूप में उसकी तवज्जो होनी चाहिए, उतना समय उसके लिए मतलब सम्मान पूर्वक देना चाहिए. उसी तरह कारीगरों का काम है, तो कला दृष्टि हमें एक नई राजनीतिक चेतना से, स्वराज चेतना से लैस करती है, और इस रूप में उसको देखा जाना चाहिए. लोकविद्या जन आंदोलन के लिए यह बहुत जरूरी है अगर इसको व्यापक बनाना है, बहुजन के लिए बनाना है और यथार्थ की सीमाएं ... जिनको सुरेश जी ने अपने लेखन में कला और उसके संबंध में विस्तार से लिखा है ... कि यथार्थ में कितनी सीमाएं हैं, कला दृष्टि या कला इस सब यथार्थ के सूत्रों को भेदने का एक साधन है, और यह साधन सबने मान्य किया हुआ है कि आप अगल बगल के सारे इससे ऊपर उठ जाते हैं और एक नया रास्ता देखने की एक नई दृष्टि को विकसित करते हैं.

तो इतना ही मैं कहना चाहती हूं कि इसकी संभावनाओं पर लोकविद्या जन आंदोलन को जरूर सोचना चाहिए. और अभी बहुत मौके है इसमें फिलहाल ... जिस तरह से सभ्यतागत सत्ता के बारे में बातें हो रही है. इसमें तो कोई पूरा का पूरा मैदान खुल गया है. अगर हम कला के दर्शनों लोकविद्या दर्शन को इकट्ठा देखें ... स्वराज-चित्त को जागरूक करने के लिए इसमें ... तो मुझे लगता है संभावनाएं हैं, इस पर हम लोगों को सोचना चाहिए।